मीराबाई

जन्म	:	1504 ।
निधन	:	1558-63 के बीच ।
जन्म-स्थान	:	राजस्थान के मेड़ता के समीपवर्ती गाँव कुड़की में ।
पिता	:	राठौर रत्नसिंह (राव दूदाजी के पुत्र और जोधपुर नगर बसाने वाले राव जोधाजी के पौत्र)।
विवाह	:	चित्तौड़ के राणा सांगा के ज्येष्ठ पुत्र राणा भोजराज से 1516 में । विवाह के 7 वर्षों के बाद भोजराज का निधन ।
रचनाएँ	:	गीत गोविंद की टीका, नरसीजी का मायरा, राग गोविंद, राग सोरठ के पद आदि के अतिरिक्त पदावली ।

सगुण भक्तिधारा की कृष्णोपासक शाखा के अंतर्गत संप्रदाय निरपेक्ष भाव-प्रवाह का प्रतिनिधित्व करनेवाली मीराबाई हिंदी भक्तिकाव्य में अत्यंत महत्त्वपूर्ण मानी जाती हैं । भक्त कवयित्री के रूप में उनकी कीर्ति देशकाल की सीमाओं का अतिक्रमण कर चुकी है । मधुर भाव की उत्कट प्रेमानुभूति मीरा के व्यक्तित्व और काव्य में उमड़ते हुए ऐसे प्रवाह के रूप में दिखाई पड़ती है जो अपने वेग और त्वरा में धर्म-जाति-कुल आदि की युगों से जमी हुई मर्यादा को बहा देती है । मीरा नारी थीं, राजकुल की थीं और विवाह के सात वर्षों के बाद ही युवावस्था में विधवा हो चुकी थीं । प्रथानुसार सती होने के विपरीत उन्होंने धार्मिक-सामाजिक रूढ़ियों से ग्रसित उस मध्यकालीन समाज में श्रीकृष्ण के प्रति प्रेम और भक्ति की उन्मत्त घोषणा कर मानो विद्रोह प्रकट किया । उन्होंने श्रीकृष्ण को ही अपना वास्तविक पति और प्रियतम बताया - "जाके सिर मोर मुकुट मेरो पति सोई ।" अपने वैधव्य को, जो उनकी नजर में सांसारिक और झूठा था, उन्होंने धता बताकर स्वयं को अजर-अमर स्वामी श्रीकृष्ण की चिर सुहागिनी बताया :

"जग सुहाग मिथ्या री सजनी हाँवा हो मिट जासी
बरन कर्याँ हरि अविनाशी म्हारो काल व्याल न खासी ।।"

तमाम तरह के लोक स्वीकृत मर्यादामय विधि निषेधों को उड़ा देने वाला यह विद्रोह ही था, किंतु मूलत: यह प्रेम-भक्ति थी, जिसकी आवेगमय अभिव्यक्ति विद्रोहात्मक हुई । मीरा के श्वसुर राणा सांगा के अवसान के बाद उनके उत्तराधिकारी राणा विक्रम सिंह को मीरा का आचरण असह्य प्रतीत हुआ । वे दिन-रात कृष्ण प्रेम में मतवाली रहकर साधु-संतों के साथ मगन होकर कीर्तन में लीन रहतीं, पाँवों में घुँघरू बाँधकर नाचतीं और कृष्ण को रिझातीं । फलत: राणा ने उन्हें अनेक यातनाएँ दीं, किंतु वे कृष्ण प्रेम में अविचल रहीं । पुष्कर यात्रा से वापसी के समय वे भक्त मंडली के साथ वृंदावन चली गईं और वहाँ से कृष्ण के द्वारका प्रवास

की सुधि आने पर द्वारका पहुँच गईं । द्वारका में रणछोड़ कृष्ण के मंदिर में मूर्ति के सम्मुख एकाग्र भाव से भक्ति में लीन रहकर उन्होंने अपना शेष जीवन व्यतीत किया । द्वारका में ही उनका अल्पवय में अवसान हुआ ।

मीरा का काव्य भी भक्तिकाल के अन्य कवियों की तरह लोककाव्य की सरलता, गूढ़ता और मार्मिकता का संस्पर्श करता है । वह राजस्थानी लोक संस्कृति और हिंदी जातीयता का पर्याय बन चुका है । मीरा का काव्य विषय की दृष्टि से एकमात्र उत्कट श्रीकृष्ण प्रेम का काव्य है; एकरस और इकसार; किंतु कहीं भी वह अपनी ताजगी और मोहक आकर्षण नहीं खोता । कृष्ण के प्रति मीरा का एकनिष्ठ अटूट समर्पण उत्तरोत्तर दूने वेग से उमड़ते भावों से परिपूर्ण है और इसलिए पाठक और श्रोता को भावविभोर तथा तल्लीन कर देता है । अपनी सांगीतिकता, माधुर्य, संप्रेषण, अभिव्यक्ति एवं भाषा के कारण वह व्यापक लोकप्रियता अर्जित कर चुका है । उसमें आनंद और वेदना का मनोहर संगम है जो मानव हृदय का कालजयी स्वत्व बन गया है ।

मीरा की तुलना भारतीय साहित्य में तमिल की वैष्णव भक्त कवयित्री गोदा (अंडाल) और कश्मीरी की शिवभक्त कवयित्री ललद्यद से भी की जाती है, किंतु सबसे बढ़कर वे कृष्ण की प्रेयसी राधा से तुलनीय प्रतीत होती हैं ।

यहाँ प्रस्तुत मीरा के दो पद मशहूर उर्दू शायर अली सरदार जाफरी के द्वारा संपादित 'प्रेम वाणी' (मीरा के पदों का चयन) से संकलित हैं । मीरा के ये पद विभिन्न गायकों के द्वारा गाए गए, लोकप्रिय और मशहूर हैं । पहले पद में मीरा का प्रियतम श्रीकृष्ण के प्रति बेपरवाह ऐकांतिक प्रेम व्यंजित हैं । श्रीकृष्ण के प्रेम में वे मस्त हैं । इसकी परवाह तक नहीं करतीं कि प्रियतम की ओर से उनके प्रेम का प्रत्युत्तर भी आता है या नहीं । यह प्रेम मधुराभक्ति की पराकाष्ठा पर पहुँचता है । दूसरे पद में उनके प्रेम का एक दूसरा ही रूप सामने आता है जहाँ वे श्रीकृष्ण के सौंदर्य और प्रेम के जादुई पाश में कुछ इस तरह बँधी हुई हैं कि अपना कहने को उनके पास कुछ भी शेष नहीं है । वह श्रीकृष्ण पर पूरी तरह न्योछावर हैं, उन पर लुट चुकी हैं । अब श्रीकृष्ण पर ही निर्भर करता है कि वे चाहे जैसे रखें । मीरा उनके रंग में रंगी और उनकी इच्छाओं में पूरी तरह ढल चुकी हैं । यह सर्वात्म समर्पण की पराकाष्ठा है ।

◆ ◆ ◆

“ मीरा बंधन काटकर बाहर आती है - सड़क पर, तो एक साथ कई बंधन टूटते हैं– पहला अंतःपुर का, दूसरा घराने का, तीसरा वैभव का, चौथा समाज का, पाँचवा देश का, छठा काल का और सातवाँ विवाह का – तब कहीं एक राजरानी की मुक्ति होती है ।...... मीरा की निर्भयता, उसकी दीवानगी एक तरह से नारी-स्वातंत्र्य का ही नहीं, मनुष्य की स्वाधीनता का शंखनाद है । भले ही इसका केंद्र भक्ति हो, लेकिन उसमें सारे लक्षण आजादी के हैं । ”

–प्रभाकर श्रोत्रिय